# रंगभेद, नस्ल और अश्वेत समस्या

**गोपाल प्रधान**

संपर्क- 956075988

अमेरिका के सामाजिक जीवन से रंगभेद कभी गायब नहीं हुआ। हाल की नस्ली घटनाओं ने दुनिया भर के लोगों का ध्यान इस समस्या की ओर खींचा है। रंगभेद का सवाल नस्ल के साथ ही वर्ग से भी जुड़ा है। उनमें स्त्री के साथ तो उत्पीड़न और भी घनघोर हो जाता है। सभी जानते हैं कि इस सवाल पर अमेरिका में भयंकर गृहयुद्ध लड़ा गया था। उसमें मार्क्स ने अमेरिकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के साथ प्रथम इंटरनेशनल की ओर से संदेश भेजकर एकजुटता जताई थी। प्रथम इंटरनेशनल में फूट पड़ने पर उसका मुख्यालय अमेरिका ले जाने का प्रस्ताव मार्क्स ने रखा था। उनसे पहले के काल्पनिक समाजवादियों में से राबर्ट ओवेन ने एक आदर्श समाज बनाने की कोशिश अमेरिका में की थी। इन सब वजहों से अमेरिका और खासकर अश्वेत आंदोलनकारियों के साथ मार्क्सवाद का संवाद लगातार रहा। पिछले बीस सालों में इस सिलसिले में हुए सोच विचार की रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास इस लेख में कुछ महत्वपूर्ण किताबों के जिक्र के सहारे किया गया है। इन किताबों में कुछ तो मशहूर अश्वेत नेताओं की जीवनियां हैं लेकिन कुछ वैचारिक किताबें भी हैं। इनके जरिए हम अश्वेत समस्या की जटिलता तथा उसके समाधान की कोशिशों को समझ सकते हैं। इन पुस्तकों से दो अश्वेत नेता और विचारक अपने समय से अधिक प्रासंगिक वर्तमान समय में महसूस होते हैं। ड्यु बोइस और मार्टिन लूथर किंग नामक इन दोनों नेताओं के बारे में और विस्तार से विवेचन होना चाहिए था लेकिन उसके लिए पर्याप्त समय न मिल सका। इस सूची से उस महाकाव्यात्मक पीड़ा की बस झलक भर मिलती है जो अमेरिका में अश्वेत आबादी के जीवन का रोज का यथार्थ है। इस पीड़ा से अधिक विशाल पहाड़ जैसा धीरज है जिसके साथ उस समुदाय के बौद्धिकों ने इस अत्यंत व्यवस्थित अमानुषिक तंत्र का विश्लेषण किया। काम करते हुए एक चीज का और अनुभव हुआ। संपत्ति और राजनीति में अश्वेत समुदाय की भागीदारी कम होने से खेल, गीत, संगीत और संस्कृति की दुनिया में उपलब्धि हासिल करने वाले अश्वेतों की लोकप्रियता बहुत अधिक होती है।

1998 में वर्सो से रोबिन ब्लैकबर्न की किताब 'द मेकिंग आफ़ न्यू वर्ल्ड स्लेवरी: फ्राम द बरोक टु द माडर्न 1492-1800 के पेपरबैक संस्करण का प्रकाशन हुआ। पहली बार 1997 में इसका प्रकाशन हुआ था। लगभग साढ़े पांच सौ पृष्ठों की यह किताब दासता की समूची अर्थव्यवस्था को नंगा कर देती है। साफ होता है कि इसके बने रहने का आधार मूल रूप से पूंजीवादी मुनाफ़े की होड़ थी। इससे भारी पैमाने पर निरपेक्ष अतिरिक्त मूल्य पैदा होता था। किताब का मकसद अमेरिकी महाद्वीप में औपनिवेशिक गुलामी की

यूरोपीय व्यवस्था की छानबीन करना और आधुनिकता के आगमन में उसकी भूमिका को रेखांकित करना है। गुलामी के पुराने रूपों से भिन्न होने के बावजूद इसमें भी पारंपरिक तत्त्व मौजूद थे। उसके चलते अटलांटिक महासागर के आर-पार सोलहवीं से उन्नीसवीं सदी के बीच वैश्विक व्यापारिक लेन-देन बहुत हद तक व्यावसायिक हुआ लेकिन जिन जगहों पर ये गुलाम काम करते थे वहां धन की भूमिका बहुत कम थी। उनके श्रम से उत्पादित तम्बाकू, चीनी और रुई ने कीमती उपभोग की नई दुनिया को जन्म दिया लेकिन उन्हें इन चीजों का इस्तेमाल करने की मनाही थी। यह काफी विकसित और तकनीकी रूप से उन्नत आर्थिक संगठन था।

1500 से 1870 के बीच अफ़्रीका से लगभग सवा करोड़ लोगों को पकड़ा गया और इसके चलते मानव इतिहास में गुलामी की सबसे विराट व्यवस्था का जन्म हुआ। अटलांटिक के आर-पार का गुलाम व्यापार जबरदस्त पेशेवर तरीकों से संचालित होता था। लगभग पंद्रह लाख गुलाम बीच रास्ते में मर गए। नए मुल्क में भी प्रत्येक वर्ष उनके मरने की रफ़्तार तेज बनी रही। जो बचे उनका जीवन इस तरह संगठित किया गया था कि उनसे अधिकतम काम लिया जा सके। उनके अपने भरण पोषण की कमाई हफ़्ते के एकाध दिन के काम से हो जाती थी। शेष समूचे समय वे अपने मालिकान के लिए काम करते थे। शोषण की ऐसी दर गुलामी की अन्य व्यवस्थाओं में भी नहीं थी। कमरतोड़ परिश्रम, कुपोषण और बीमारी से होने वाली मौतों के चलते गुलामों की नई खेप की जरूरत हमेशा बनी रहती थी। अमेरिका में उनकी तादाद रोम के गुलामों से भी अधिक हो गई थी।

अमेरिका में अफ़्रीकी गुलाम उस समय लाए गए जब स्थानीय आबादी पर विपत्ति के बादल टूट पड़े थे। नए आए इन अफ़्रीकियों ने औपनिवेशिक ढांचे को बरकरार रखा और सभी तरह के काम संभाल लिए। प्लांटेशनों का विकास होने के बाद गुलामों में अफ़्रीकी छा गए और स्थानीय बाशिंदों को हाशिए पर धकेल दिया गया। कुछ खास तरह के काम केवल अफ़्रीकी लोग करने लगे। पुराने समय की गुलामी में रोजगार के मामले में विविधता थी। घर में बच्चों का शिक्षण, निचले स्तर का प्रशासन, सेवा टहल और मजदूरी तक का काम गुलामों के जिम्मे हुआ करता था। गुलामी वंशानुगत तो होती थी लेकिन पीढ़ी दर पीढ़ी उनकी हैसियत में कुछ सुधार भी आता था। इस गुलामी में ऐसी कोई संभावना नजर नहीं आती थी। इस गुलामी में नवीनता का कारण यह था कि आधुनिकता की कुछ नई प्रक्रियाएं भी इससे जुड़ गईं। उनके कार्यस्थल पर काम तार्किक तरीके से संगठित हुआ करता था। राष्ट्रीय भावना और राष्ट्र-राज्य का उत्थान भी इसके साथ जुड़ गया। नस्ली पहचान का विमर्श पैदा हुआ। मजदूरी आधारित श्रम और बाजार संबंधों का प्रसार उनके जीवन में हुआ। प्रशासकीय नौकरशाही और आधुनिक कर प्रणाली भी नई चीजें थीं। परिष्कृत व्यवसाय और संचार, उपभोक्ता समाज का उदय, अखबार का आगमन और वैयक्तिकता के प्रवेश ने इस समय की गुलामी को प्राचीन गुलामी से काफी हद तक भिन्न बना दिया।

आधुनिकता और गुलामी के बीच इस संपर्क के चलते प्रगति के अंधेरे पक्ष के बारे में भी सोचने की जगह बनती है। आज हम जानते हैं कि आधुनिक सामाजिक शक्तियां अत्यंत विध्वंसक और अमानवीय अंजामों तक भी ले जा सकती हैं। बीसवीं सदी में युद्धों और उपनिवेश के इतिहास के बाद प्रगति के बारे में पुनर्विचार अनजानी बात नहीं रही। फिर भी नस्ली गुलामी के साथ जुड़ी विचारधाराओं और संस्थाओं की पूरी छानबीन अभी नहीं हो सकी है।

सेड्रिक जे रोबिन्सन की किताब 'ब्लैक मार्क्सिज्म: द मेकिंग आफ़ द ब्लैक रैडिकल ट्रेडीशन' का प्रकाशन वैसे तो 1983 में ज़ेड प्रेस से हुआ था लेकिन दुबारा 2000 में लेखक की एक नई भूमिका तथा रोबिन डी जी केल्ली के नए विषय प्रवेश के साथ यूनिवर्सिटी आफ़ नार्थ कैरोलिना प्रेस से प्रकाशित हुई। शीर्षक ही स्पष्ट कर देता है कि वंचना की सच्चाई को छिपाने वाले मोहक नामों की जगह लेखक कालेपन की अस्मिता को गौरव की बात समझता है। केल्ली ने बताया है कि सोलह साल पहले यह किताब उनके हाथ आई थी और इसने उनकी जिंदगी बदल दी। जब किताब छपी थी तो कोई इसका जिक्र नहीं करता था, न ही इसका कोई विज्ञापन कहीं नजर आया था।

इसमें न केवल अश्वेत वाम परम्परा का इतिहास था बल्कि राजनीति, इतिहास, दर्शन, संस्कृति और जीवनी आदि को मिलाकर पश्चिम के उत्थान के इतिहास का पुनर्लेखन किया गया है। साथ ही इसमें पश्चिमी मार्क्सवाद की आलोचना है कि वह पूंजीवाद के नस्ली चरित्र को या उसकी पैदाइश की सभ्यता को या फिर यूरोपेतर जनांदोलनों को समझने में नाकाम रहा। इसके अतिरिक्त इसमें आधुनिकता, राष्ट्रवाद, पूंजीवाद, क्रांतिकारी विचारधारा तथा पश्चिमी नस्लवाद के उदय और 1848 से लेकर आज तक के विश्वव्यापी वामपंथ के बारे में हमारी आम समझ को चुनौती दी गई है। इस किताब से क्रांतिकारी चिंतन और क्रांति का केंद्र यूरोप से हटकर तथाकथित हाशिये की ओर चला गया। औपनिवेशिक और नस्ली पूंजीवादी शोषण के शिकार हाशिया पर पैदा होने वाले क्रांतिकारी चिंतन और व्यवहार पर उत्पीड़ितों के सांस्कृतिक अनुभवों की छाप थी।

फिर भी रोबिन्सन ने कहानी की शुरुआत यूरोप से की है। अफ़्रीकी लोगों के बारे में लिखी इस किताब की शुरुआत यूरोप से इसलिए हुई है ताकि हमारी नजर का जाला साफ हो। असल में यह किताब अफ़्रीकी अश्वेतों के हालात और आंदोलनों को समझने में पश्चिमी मार्क्सवाद की आलोचना है इसलिए शुरुआत पश्चिम से हुई है। उनका यह भी कहना है कि यूरोपीय सभ्यता में पूंजीवाद के उदय से पहले ही पश्चिमी नस्लवाद ने जड़ जमा ली थी। अफ़्रीकी श्रमिकों से मुलाकात के पहले यूरोप के भीतर ही सर्वहारा के नस्लीकरण और गोरेपन के आविष्कार की प्रक्रिया शुरू हुई थी। उनका कहना है कि यूरोप में कामगार आम तौर पर अप्रवासी थे। नस्ली पदानुक्रम में सबसे निचली सीढ़ी पर इन अप्रवासी मजदूरों को रखा जाता था। उदाहरण के लिए यूरोप में स्लाव और आयरलैंड के कामगार प्रथम अश्वेत थे। इस तरह अमेरिका में जो कुछ

उन्नीसवीं सदी में प्रत्यक्ष हुआ उसकी जड़ें सदियों पुरानी थीं। इसी नस्ली माहौल में पूंजीवाद का उदय हुआ। वे इस मार्क्सवादी धारणा की आलोचना करते हैं कि पूंजीवाद का जन्म सामंतवाद के क्रांतिकारी निषेध से हुआ। उनका कहना है कि पूंजीवाद सामंतवाद के भीतर पश्चिमी नस्लवाद की छाया में फला फूला। इस तरह नस्ली पूंजीवाद की आधुनिक विश्व व्यवस्था का जन्म हुआ जो अपने अस्तित्व के लिए गुलामी, हिंसा, साम्राज्यवाद और जनसंहारों पर निर्भर है। इसके लिए वे आयरलैंड के श्रमिकों का उदाहरण लेते हैं और बताते हैं कि नस्ली सोच के चलते ही ब्रिटेन के पूंजीपति आयरिश कामगारों को कम पगार देते थे। शासक वर्ग ने इस नस्लवाद का आविष्कार विभाजन के लिए नहीं किया था बल्कि यह सर्वहाराकरण की प्रक्रिया थी। समाजवादी विचारों को भी वे इसी शासन की एक रणनीति समझते हैं और इसके लिए मार्क्स की भी आलोचना करते हैं। उनका यह भी मानना है कि पश्चिम में ही नीग्रो की धारणा का निर्माण हुआ। इसे बनाना आसान नहीं था। इसके लिए बड़े पैमाने पर मानसिक और बौद्धिक ऊर्जा खर्च की गई। प्राचीन विश्व का इतिहास इसके लिए फिर से लिखना पड़ा। यूरोप और अफ़्रीका की पारस्परिकता को मिटाकर अफ़्रीका को नीग्रो बनाया गया। यूरोपीय ज्ञान में मिस्र के बौद्धिक योगदान पर परदा डालकर पश्चिम की गोरी शुद्धता की रक्षा की गई। अफ़्रीका में सभ्यता की मौजूदगी से इनकार किया गया। इस तरह आधुनिकता के एकमात्र स्रोत के रूप में यूरोप की प्रतिष्ठा की गई और अफ़्रीका को मानव संवेदना से हीन साबित किया गया। इसी समय यूरोप में श्रमिकों को जमीन से हटाकर कारखानों में ठूंसा जा रहा था और अफ़्रीकी कामगार को गुलामों के विश्व व्यापार के जरिए दुनिया से जोड़ा जा रहा था। इस गुलामी और शोषण के अफ़्रीकी प्रतिरोध को समझने के लिए पूंजीवाद के घेरे से बाहर निकलकर अफ़्रीकी संस्कृति को देखना होगा। जो श्रमिक लाए गए थे वे जहाजों में अपने साथ अफ़्रीकी संस्कृति भी ढोकर लाए थे।

इसी संस्कृति ने गुलामी और नस्लवाद से उनके आरम्भिक प्रतिरोध को ताकत दी। पश्चिमी समाज की आलोचना की जगह उन्होंने इसे पूरी तरह खारिज करने का रास्ता चुना। पश्चिमी समाज को बदलने या पूंजीवाद को उखाड़ फेंकने की जगह उन्होंने अतीत की रक्षा की कोशिश की। बहरहाल औपचारिक उपनिवेशवाद के आगमन और पूरी तरह नियंत्रित सामाजिक संरचना में अश्वेत कामगार के समायोजन के बाद पश्चिम और उपनिवेशवाद की आलोचना शुरू होती है। इसके बाद वे सामाजिक संबंधों को बदलने और क्रांतिकारी बदलावों की कोशिश के साथ खड़े होने लगे। दूसरी ओर उपनिवेशवाद के अंतर्विरोधों ने ऐसे देशी बुर्जुआ समुदाय को जन्म दिया जो यूरोपीय जीवन और चिंतन से परिचित था। उसका काम शासन चलाने में मदद करना था। उन्हें यूरोपीय नस्लवाद का शिकार होना पड़ता था और वे देशी जीवन और संस्कृति से अलगाव में भी थे। इस अंतर्विरोधी स्थिति के चलते उनमें विद्रोह उपजा और इसके चलते क्रांतिकारी अश्वेत बौद्धिक समुदाय का सृजन हुआ। किताब के अंतिम हिस्से में रोबिन्सन ने चुनिंदा अश्वेत बौद्धिकों की जीवनी के जरिए इस क्रांतिकारी अश्वेत बौद्धिक समुदाय की परीक्षा की है। इसके तहत उन्होंने ड्यु बोइस, सी एल आर जेम्स और रिचर्ड राइट का जिक्र किया है। इस बौद्धिक समुदाय का उभार प्रथम

विश्वयुद्ध, उसके बाद महामंदी और फ़ासीवाद के दौर में हुआ था। इनके जरिए रोबिन्सन अमेरिका और वहां बसे अफ़्रीकी समुदाय का दो सौ सालों का इतिहास छान डालते हैं। वे बताते हैं कि ये सभी बौद्धिक मार्क्सवाद में दीक्षित थे, विश्व पूंजीवाद के संकट से गहराई से प्रभावित थे तथा मजदूर और उपनिवेशवाद विरोधी आंदोलनों के असर में थे। मंदी और युद्ध के दौरान उन्होंने ऐसी किताबें लिखीं जो अश्वेत क्रांतिकारी परम्परा की ऐतिहासिक चेतना से आप्लावित हैं।

1999 में यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिनेसोटा प्रेस से एडोल्फ़ रीड जूनियर की किताब 'स्टर्रिंग्स इन द जग: ब्लैक पोलिटिक्स इन द पोस्ट-सेग्रेगेशन एरा' का प्रकाशन हुआ। इस किताब की प्रस्तावना जूलियन बान्ड ने लिखी है। इसमें उनका कहना है कि बीसवीं सदी के शुरू में अश्वेत आंदोलन की दो धाराओं का उदय हुआ। अमेरिका के दक्षिण से उनमें से एक बुकर टी वाशिंगटन थे जिनके मुताबिक सही रास्ता खुद की सहायता का है। उनका यह भी कहना था कि सामाजिक और राजनीतिक बराबरी की मांग व्यर्थ है। खेती, विभिन्न पेशों और व्यापार में जब उनकी मजबूत हालत होगी तो राजनीतिक ताकत और सामाजिक सम्मान खुद प्राप्त हो जाएगा। दूसरे ड्यु बोइस थे जो मानते थे कि राजनीतिक अधिकारों के बिना आर्थिक समृद्धि प्राप्त करना असम्भव है। राजनीतिक सत्ता के जरिए ही नीतियों को इस तरह प्रभावित किया जा सकता है ताकि सरकारी संरक्षण मिले, स्कूलों को अनुदान मिले और कानून के समक्ष बराबरी हासिल हो। लोग तो मानते हैं कि ड्यु बोइस की राय सही साबित हुई लेकिन सच यह है कि दोनों तरीकों के बीच सहीपन का संघर्ष आज तक जारी है। उनके मुताबिक लेखक ने उन्हीं तर्कों को और भी परिष्कार के साथ प्रस्तुत किया है। कानूनी तौर पर नस्लभेद की समाप्ति से लेकर 1990 के मध्य तक का विवेचन किताब में किया गया है। पुरानी बहस को ही इस दौर की प्रमुख घटनाओं के माध्यम से उठाया गया है। इनकी बातें इस समय के लिए प्रासंगिक होने जा रही हैं। पचीस साल बाद अमेरिका और भी विविधता से भरा होगा। ड्यु बोइस या वाशिंगटन से बहुत आगे जा चुका होगा लेकिन उसके विचारों, रुझानों और आचरण पर अतीत की छाया होगी।

1954 में सुप्रीम कोर्ट ने स्कूलों में नस्लभेद को गैर कानूनी घोषित किया। इसके चलते नस्लभेद की नैतिकता को चुनौती देने वाले अहिंसक आंदोलनों की बाढ़ आ गई। बसों में, भोजन कक्ष में और मतदान के मामले में नस्लभेद को चुनौती मिलने लगी। अदालत, संसद और सड़क की लड़ाइयों के जरिए इन भेदों को खत्म किया गया। समान नागरिक अधिकारों से शुरू हुआ आंदोलन राजनीतिक और आर्थिक सत्ता पर कब्जे तक जा पहुंचा। अश्वेत स्त्री पुरुष उन पदों पर जा बैठे जिनके बारे में उन्होंने पहले सपना भर देखा होगा। किताब के लेखक रीड का मानना है कि दक्षिणी प्रांतों के बाहर समेकन का नारा हवा हवाई था। साठ के दशक की उपलब्धियों का जमीन पर उतरना बाकी है। क्योंकि नस्लभेद और सरकार प्रायोजित उत्पीड़न की

समाप्ति महत्व की बात तो थी लेकिन इससे महज नस्लभेद के उत्पीड़नकारी चेहरे को उजागर किया जा सका।

1999 में आक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से जेम्स एडवर्ड स्मेटहर्स्ट की किताब 'द न्यू रेड नीग्रो: द लिटरेरी लेफ़्ट ऐंड अफ़्रीकन अमेरिकन पोएट्री, 1930-1946' का प्रकाशन हुआ। लेखक के मुताबिक 1930 और 1940 के दशकों में ऐसे अश्वेत कवियों के महत्वपूर्ण संग्रह प्रकाशित हुए जिनके चलते साहित्य में वाम विचारों की प्रतिष्ठा में निर्णायक मदद मिली। इनकी परिपक्व शैली के दर्शन भी उसी दौर में हुए। फिर भी उस दौर की इस कविता पर गम्भीर बातचीत कम ही हुई है। जो सामग्री उपलब्ध है भी वह जीवनीपरक अधिक है, आलोचनात्मक कम है। बात होती भी है तो इस समय के पहले या बाद की रचनाओं के बारे में। अश्वेत साहित्य पर ढेर सारे लेखन को देखते हुए यह अभाव और भी खटकता है। किताब में इस अभाव के गिनाए कारणों पर सवाल उठाए गए हैं चाहे सौंदर्य या महत्व को उसका कारण बताया गया हो। इसके जरिए हम हिंदी में दलित साहित्य के साथ होने वाले बरताव को समझ सकते हैं। उस पर साहित्यिक प्रतिमानों पर खरा न उतरने का बहाना बनाकर बात करने से परहेज किया जाता है।

2000 में आक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से रोबिन डी जी केल्ली और अर्ल लेविस के संपादन में 'टु मेक आवर वर्ल्ड एन्यू: ए हिस्ट्री ऑफ़ अफ़्रीकन अमेरिकन्स टु 1880' का पहला खंड प्रकाशित हुआ। दूसरा खंड 'टु मेक आवर वर्ल्ड एन्यू: ए हिस्ट्री ऑफ़ अफ़्रीकन अमेरिकन्स सिन्स 1880' भी इसी साल प्रकाशित हुआ। संपादकों का कहना है कि अफ़्रीकी अमेरिकी जनता का इतिहास दुनिया को फिर से बनाने की दुखद महागाथा से कम नहीं है। जबरदस्ती उठाकर लाए गए इन लोगों को आलू प्याज की तरह खरीदा और बेचा गया। इन्होंने और इनके वारिसान ने दिन रात अपनी हालत सुधारने की चेष्टा जारी रखी। इसमें अगर वे सफल नहीं हुए तो भी आधुनिक पश्चिम की सर्वोत्तम आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक उपलब्धियों में उनके कार्य, चिंतन और सपनों का योगदान है। इनके परिश्रम से अपार संपदा का सृजन हुआ और इससे पूंजीवाद के आगमन में मदद मिली। इनके प्रतिरोधों ने गुलामी प्रथा का अंत किया तथा इनकी रचनात्मकता ने पश्चिमी कला के लगभग सभी रूपों को प्रभावित किया। आजादी के इनके सपनों ने अमेरिका की राजनीति को तो बदल ही दिया, आज तक के दुनिया भर के प्रतिरोध आंदोलनों पर उनका असर है। शुरू से उनकी आत्मछवि अंतरराष्ट्रीय रही। किताब में भी अश्वेत जनता के संघर्षों और उपलब्धियों को व्यापक अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में देखा गया है।

इनका इतिहास अटलांटिक और हिंद महासागर से घिरे अफ़्रीकी महाद्वीप से शुरू होता है। तरह-तरह की भाषाओं, परंपराओं, इतिहासों और धर्मों वाले लोग इस महाद्वीप के निवासी थे। उनमें कुछ लोग बहुत पुराने साम्राज्य के वासी थे तो कुछ पारिवारिक समूहों में रहते थे। कुछ एक ईश्वर के पुजारी थे तो कुछ एकाधिक ईश्वरों की पूजा करते थे। कुछ समुदायों के मुखिया पुरुष थे तो कुछ की स्त्रियां। इतनी समृद्ध

सांस्कृतिक विरासत के साथ वे अमेरिका आए। इन लोगों ने लम्बे समय तक दुनिया के मामलों में केंद्रीय भूमिका निभाई थी। औषधि, भाषा और शिल्प में मिस्र की उन्नति से ग्रीस और रोम पर असर पड़ा था। यहां से निकला सोना भूमध्य सागर तक जाता था जिसका संग्रह करके इटली के व्यापारियों ने यूरोपीय व्यापार का प्रसार किया था। टिम्बकटू जैसे ज्ञान के केंद्रों की ओर तमाम दुनिया से ज्ञान पिपासु आते थे। इसका पराभव तब शुरू हुआ जब अटलांटिक सागर का दूसरा रास्ता खुला और यूरोपीय लोग अमेरिका पहुंचे। वहां के प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए प्रचुर मानव श्रम की जरूरत थी। अफ़्रीका के श्रमिकों का लाभ उठाना वे शुरू कर चुके थे। इसके बाद गुलाम बनाकर ले जाने का ऐसा सिलसिला शुरू हुआ जिसका अंत ही समझ नहीं आता था।

2002 में पालग्रेव से आयन ला की किताब 'रेस इन द न्यूज' का प्रकाशन हुआ। लेखक का कहना है कि नस्ल की धारणा का पिछले सौ सालों से विरोध हो रहा है लेकिन बहुतेरे लोग अब भी इसमें यकीन करते हैं। वैश्विक संचार में इस धारणा का अब भी प्रसार है। उदाहरण के लिए 1998 के फ़ुटबाल के विश्व कप के उद्घाटन समारोह में पेरिस में दुनिया भर के लोगों का प्रतिनिधित्व दिखाने के लिए प्लास्टिक के विशाल गोले में चार रंगों से रेखांकन किया गया था। टेलीविजन के जरिए सारे संसार में लोगों ने इसे देखा। ऐसे नस्ली प्रतिनिधित्व के सहारे लोग शारीरिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अंतर को गलत ही सही आसानी से पहचान लेते हैं। इसका इस्तेमाल श्रेष्ठता, शुद्धता और बहिष्कार के लिए अक्सर किया जाता है। कभी-कभी न्याय, समानता और स्वतंत्रता की दावेदारी में भी इससे मदद ली जाती है। इस तरह नस्ल की धारणा का इस्तेमाल नस्लवाद के साथ उसके विरोध के लिए भी होता रहा है। इसके चलते ही समाचारों में देश, नृजातीय समूह या खासकर प्रवासियों की रपट लगाते हुए नस्ल के चश्मे से घटनाओं को पेश किया जाता है। इस प्रस्तुति से नस्ली विचारों के निर्माण पर प्रभाव पड़ता है।

2003 में यूनिवर्सिटी प्रेस ऑफ़ मिसीसीपी से एंथनी डवाहरे की किताब 'नेशनलिज्म, मार्क्सिज्म, ऐंड अफ़्रीकन अमेरिकन लिटरेचर बीट्वीन द वार्स: ए न्यू पैंडोरा'ज बॉक्स' का प्रकाशन हुआ। लेखक का मानना है कि राष्ट्रवाद और मार्क्सवाद पिछली सदी की दो सबसे प्रभावी विचार थे। उन्होंने दुनिया भर में ढेर सारे सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलनों को जन्म दिया। इन दोनों विचारों का असर हार्लेम जागरण के अश्वेत लेखकों तथा महामंदी के समय के सर्वहारा साहित्यांदोलन पर देखना किताब का घोषित मकसद है। असल में हार्लेम न्यू यार्क में अश्वेत समुदाय के रिहायशी इलाके का नाम है इसलिए अश्वेत जागरण को हार्लेम जागरण कहा जाता है। आर्थिक संकट और युद्ध के उन दिनों में बहुतेरे अश्वेत लेखक सामाजिक समता की अपनी आकांक्षा के अनुरूप लगने वाले राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय विचारों और आंदोलनों के साथ खड़े हुए। गुलामी, भेदभाव और नस्लवाद के प्रदीर्घ निराशाजनक इतिहास के बावजूद उनको लगा कि

आत्मनिर्णय की सम्भावना बची हुई है। दोनों विश्वयुद्धों के बीच के बीस साल अफ़्रीकी अमेरिकी लेखकों के लिए राजनीतिक तौर पर सर्वाधिक उत्पादक और सांस्कृतिक रूप से समृद्धशाली थे।

2003 में हार्पर कोलिन्स ई-बुक्स से ड्रयू डी हानसेन की किताब 'द ड्रीम: मार्टिन लूथर किंग, जूनियर, ऐंड द स्पीच दैट इंस्पायर्ड ए नेशन' का प्रकाशन हुआ। लेखक का कहना है कि 1963 में जब मार्टिन लूथर किंग ने यह ऐतिहासिक भाषण दिया था उस समय अमेरिका में अश्वेत जनता नस्ली जाति व्यवस्था में जिंदगी गुजार रही थी। अश्वेतों की भारी बहुसंख्या दक्षिणी अमेरिका में केंद्रित थी। वहां गोरों और कालों के लिए होटल, तट, स्नानघर, रेस्तरां और पानी के नलके अलग-अलग थे। सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बावजूद स्कूलों में यह भेदभाव बना हुआ था। कई जगहों पर मतदान में भी अश्वेतों को भाग नहीं लेने दिया जाता था। उनके साथ दिल दहला देने वाले हिंसक कृत्य होते थे। उत्तरी अमेरिका में यही भेदभाव प्रत्यक्ष नहीं था। शहरों में श्वेत और अश्वेत बस्तियां अलग थीं। जमीन बेचने वालों में अश्वेतों को जमीन न बेचने का अलिखित चलन था। अश्वेत बस्तियों के मकान मालिकों को बैंक कर्ज नहीं देते थे। सरकार इन बस्तियों को झोपड़पट्टी मानकर गिरा दिया करती थी। श्वेत बस्तियों में रहने वाले अश्वेतों को तरह-तरह से सताया जाता था। राष्ट्रीय अर्थतंत्र के बहुत सारे क्षेत्रों में वे अनुपस्थित थे। उनकी औसत आमदनी गोरों के मुकाबले आधी तिहाई होती थी। बेरोजगारी गोरों के मुकाबले दो गुनी थी और गिरफ़्तारी पांच गुनी। फ़िल्मों में अश्वेत पात्र नजर नहीं आते थे। खेलों में बेसबाल में तो उनकी मौजूदगी थी लेकिन उन्हें गोल्फ़, टेनिस या बास्केटबाल खेलते देखना असंभव था। लेकिन वे नागरिक अधिकारों के लिए चलने वाले आंदोलनों में भाग ले चुके थे जिसकी शुरुआत 1955 में मांटगुमरी में हो चुकी थी। किंग का झुकाव आंदोलनों की ओर नहीं था। वे पढ़ाई-लिखाई से जुड़े हुए थे और उनकी रुचि धार्मिक थी। प्रदर्शन में भी वे सेवा भाव से शामिल हुए थे। उन्हें प्रदर्शन का नेतृत्व करते हुए मुख्य भाषण देना था जिसे तैयार करने का समय बहुत कम था। उन्हें रविवारीय उपदेश का अभ्यास रहा था जिसकी तैयारी के लिए भरपूर समय मिलता था। इसके लिए उनके हाथ में कुल बीस मिनट थे। प्रचंड घबराहट में उन्होंने ईश्वर को पांच मिनट याद किया और बचे हुए पंद्रह मिनट में भाषण तैयार करने बैठे। इतने कम समय में भाषण का बस दिमागी खाका ही बन सका।

2003 में बेसिक बुक्स से बेवर्ली डैनिएल तातुम की किताब '"ह्वाइ आर ऑल द ब्लैक किड्स सीटिंग टुगेदर इन द कैफ़ेटेरिया?": ऐंड अदर कनवर्सेशन्स एबाउट रेस' का प्रकाशन हुआ। लेखक के मुताबिक किताब लिखना बोतल में कुछ लिखकर उसे समुद्र में डाल देने की तरह होता है। लेखक अपने पाठक या उस पर पड़े प्रभाव से पूरी तरह अनजान होता है। बस उम्मीद होती है कि कभी कोई इसे पढ़ेगा और जवाब देगा। खुद वे खुशकिस्मत रहे कि लोगों ने मेल, पत्र, फोन और आमने-सामने अपनी राय जताई। इससे उन्हें बच्चों से नस्ली भेदभाव के बारे में बात करने में सुभीता हुआ। शीर्षक के प्रश्नवाची होने से संवाद स्थापित करने में आसानी हुई। संयोग से क्लिंटन को भी इसमें रुचि पैदा हुई। वे चाहते थे कि लेखिका कुछ

अन्य लेखकों और विद्यार्थियों के साथ नस्ल संबंधी उनकी खुली सभा में मौजूद रहें। इसमें शामिल होकर उन्हें खासी प्रेरणा मिली। लगा कि एक गोरा राष्ट्रपति अपने पद की सत्ता का सदुपयोग कर रहा है। लेखक का मूल अनुशासन मनोविज्ञान है।

2004 में रौमान ऐंड लिटिलफ़ील्ड पब्लिशर्स से डेल डब्ल्यू तोमिच की किताब 'थ्रू द प्रिज्म ऑफ़ स्लेवरी: लेबर, कैपिटल ऐंड वर्ल्ड इकोनामी' का प्रकाशन हुआ। पूंजीवाद के साथ दास प्रथा किस तरह नाभिनालबद्ध है इसका विवेचन इस किताब की विषयवस्तु है। लेखक का कहना है कि दासता ने आर्थिक शोषण और सामाजिक दमन के मुख्य औजार के बतौर आधुनिक विश्व अर्थतंत्र के निर्माण और पूंजी के ऐतिहासिक विकास में केंद्रीय भूमिका निभाई है। सोलहवीं सदी में अमेरिका में दासों के जरिए उत्पादन ने श्रम के वैश्विक विभाजन और विश्व बाजार में निर्णायक योगदान किया। अफ़्रीकी दासों की उत्पादक गतिविधि ने श्रम, व्यापार और सत्ता के मामले में ऊंच-नीच की नई व्यवस्था कायम की और विश्व अर्थतंत्र के केंद्र में यूरोप को ला दिया। दुनिया के पैमाने पर पूंजी के सामाजिक संबंधों के पुनर्गठन और ऐतिहासिक प्रसार के अनुरूप अमेरिका में दासता रूप बदलती रही है। विश्व अर्थतंत्र की जरूरत के मुताबिक ही दास श्रम के उपयोग के तरीके तय किए जाते रहे हैं।

2004 में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से निखिलपाल सिंह की किताब 'ब्लैक इज ए कंट्री: रेस ऐंड द अनफ़िनिश्ड स्ट्रगल फॉर डेमोक्रेसी' का प्रकाशन हुआ। किताब की शुरुआत इस तथ्य से होती है कि 1967 में मार्टिन लूथर किंग ने वियतनाम युद्ध का विरोध किया। इस पर उनकी खिल्ली उड़ाई गई। इस बात को भूलने में एक साल बाद हुई उनकी हत्या से मदद मिलती है। तमाम सबूत बताते हैं कि इसके लिए उन्हें देशद्रोही तक कहा गया था। कुछ ही साल पहले वे अमेरिका की अंतरात्मा के संरक्षक माने गए थे! वे वियतनाम में औपनिवेशिक युद्ध को घरेलू मोर्चे पर नस्ली समानता और न्याय न दे पाने से जोड़कर देखते थे। उनका कहना था कि कम्युनिस्टों से भय पैदा करके अमेरिका की क्रांतिकारी परम्परा को प्रतिक्रियावादी इतिहास में बदला जा रहा है। इस छवि निर्माण के लिए आर्थिक संसाधन झोंक दिए जा रहे हैं, आपसी विवाद को निपटाने के लिए हिंसा और सेना की वकालत की जा रही है तथा समाज सुधार की परियोजना में यकीन समाप्त किया गया है। उन्हें लगा कि अमेरिका की आत्मा के विनाश में इस युद्ध का भी हाथ होगा। लेखक ने कयास लगाया है कि अगर किंग 1968 के बाद भी जीवित रहते तो सम्भव है कि पाल राबसन या ड्यु बोइस जैसे अन्य अश्वेत क्रांतिकारी नेताओं की तरह उन पर भी गद्दार और अमेरिका विरोधी होने का आरोप लगाया गया होता।

2005 में हेमार्केट बुक्स से अहमद शाकी की किताब 'ब्लैक लिबरेशन ऐंड सोशलिज्म' का प्रकाशन हुआ। अस्मिता के सवालों से मार्क्सवाद के संवाद के मामले में अश्वेत लोगों के संघर्ष सबसे अहम रहे हैं इसलिए स्वाभाविक रूप से इस पहलू को उजागर करते हुए अनेक किताबें लिखी गई हैं। लेखक ने

अपनी बात अगस्त 2005 के कटरीना तूफान से शुरू की है। इस तूफान से सबसे अधिक वे इलाके प्रभावित हुए जहां अफ़्रीकी-अमेरिकी आबादी है और तूफान तथा राहत के दौरान अमेरिकी समाज का नस्लवादी चेहरा सामने आया। सरकारी संस्था ने पीड़ितों के हालात के लिए उन्हीं को जिम्मेदार ठहराया। कहा गया कि जब स्थानीय अधिकारियों ने उन्हें अन्य स्थानों पर चले जाने का निर्देश दिया था तो उन्हें अपना घरबार और रोजी-रोजगार छोड़कर नगर खाली कर देना चाहिए था। बात यह थी कि निर्देश देर से तो आए ही, उनके पास नगर खाली करने और रहने के वैकल्पिक इंतजाम की सुविधा नहीं थी। एक महीने बाद इराक युद्ध विरोधी एक प्रदर्शन में कटरीना प्रभावित एक काली महिला ने बैनर लहराया जिसमें लिखा था कि किसी इराकी ने मुझे छत पर मरने के लिए नहीं छोड़ा है। जो संसाधन तूफान पीड़ितों को राहत पहुंचाने के लिए इस्तेमाल हो सकते थे उन्हें इराक युद्ध में झोंक दिया गया इसलिए तूफान पीड़ितों ने युद्ध का विरोध किया। व्यवस्था की वरीयता तूफान पीड़ितों को राहत देने की जगह युद्ध जारी रखना थी। लेखक की मान्यता है कि आम धारणा के विपरीत अमेरिकी समाज भीषण टकराव से गुजर रहा है और बदलाव लाने की कोशिशों के केंद्र में काले लोगों की आबादी है। लेखक ने किताब के दो उद्देश्य घोषित किए हैं- 1) अमेरिका में काले लोगों के मुक्ति आंदोलन के कुछ प्रमुख वैचारिक-राजनीतिक धाराओं का जायजा लेना और 2) साबित करना कि समाजवादी विचार और संगठन अतीत में इस आंदोलन के अभिन्न अंग रहे हैं और भविष्य में भी रहेंगे। वर्तमान राजनीतिक माहौल में बहुतेरे लोगों को यह बात बेतुकी लग सकती है लेकिन यह तो अकाट्य सचाई है कि अमेरिका में बड़े पैमाने पर जनता के क्रांतिकारीकरण के दौर आए हैं। इन दौरों में मौजूदा शासन और उसकी कार्यपद्धति का लाखों लोगों ने विरोध किया। साठ के उत्तरार्ध में अमेरिकी समाज में बदलाव के आंदोलनों के साथ मार्क्सवाद घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ था।

2005 में न्यूयार्क यूनिवर्सिटी प्रेस से गेराल्ड हार्ने की किताब 'रेडसीज: फ़र्दिनान्द स्मिथ ऐंड रैडिकल ब्लैक सेलर्स इन द यूनाइटेड स्टेट्स ऐंड जमैका' का प्रकाशन हुआ। लेखक ने किताब की शुरुआत अमेरिका में दूसरे विश्वयुद्ध से वापस लौटे सैनिकों के नागरिक अभिनंदन से की है। इस समारोह में जिन्हें सम्मानित करना था उनमें जमैका मूल के फ़र्दिनान्द स्मिथ नामक अश्वेत भी थे। वे कम्युनिस्ट पार्टी के महत्त्वपूर्ण नेतृत्वकारी सदस्य थे। वे सौ नौसैनिकों के बेड़े के मुखिया थे। उनके कम्युनिस्ट होने के बावजूद दो सौ लोग उस सभा में श्रमिकों, नीग्रो समुदाय और देश के लिए उनकी सेवा के गुण गाते रहे। वहां तमाम अश्वेत नेताओं की ऐतिहासिक जुटान हुई थी। शीतयुद्ध अभी शुरू नहीं हुआ था। इसके बाद जल्दी ही कम्युनिस्टों के विरोध का जो अभियान शुरू हुआ उसके चलते 1951 में उन्हें जमैका वापस लौटना पड़ा। लौटने से पहले तक मजदूरों के मामलों पर उन्होंने लगातार सार्थक हस्तक्षेप किए। हार्लेम में उनकी लोकप्रियता के कारण अक्सर उन्हें बुलाया जाता था। उनके ट्रेड यूनियन का असर बहुत अधिक था। उनके कामों में मदद के लिए बाकायदे तीन चार सहायक होते थे। यूनियन के साथियों के मालिकान के साथ झगड़ों का निपटारा और यूनियन की पत्रिका के लिए नियमित लेख तैयार करने से लेकर अन्य अखबारों के लिए लेखन तक सभी काम कुशलता

के साथ निपटाए जाते थे। अप्रवासी कम्युनिस्ट होने के बावजूद उनके इस असर की वजह पारंपरिक राजनीतिक समूहों के मुकाबले कम्युनिस्टों द्वारा नस्ली समानता के सवाल पर अधिक प्रगतिशील नजरिया अपनाने के कारण देश में उनके फैलते प्रभाव में निहित थी। जिम क्रो कानूनों के विरोध में अश्वेत समुदाय को कुछ जीतें भी मिलने लगी थीं। इसके अतिरिक्त अमेरिका की नौसेना में अप्रवासी लोग कुछ अधिक थे भी। इन सभी कारणों से स्मिथ की लोकप्रियता बहुत ज्यादा थी।

2005 में बीकन प्रेस से एन सी बेली की किताब 'अफ़्रीकन वायसेज ऑफ़ द अटलांटिक स्लेव ट्रेड: बीयान्ड द साइलेन्स ऐंड द शेम' का प्रकाशन हुआ। लेखक का कहना है कि दास प्रथा के समूचे इतिहास के बारे में चुप्पी बरती जाती है। टुकड़े-टुकड़े में बातें सुनाई पड़ती हैं। अफ़्रीकी समाज पर इस व्यवस्था के प्रभाव के बारे में बहस और विश्लेषण बहुत समय से चलता रहा है। 1969 में पहली बार अमेरिका ले जाए गए अफ़्रीकी लोगों की संख्या जानने की वैज्ञानिक कोशिश हुई। लेकिन इससे पहले ही ड्यु बोइस ने अपना काम शुरू कर दिया था। बाद में भी बहुतेरे लोग इस क्षेत्र में शोधरत रहे। फिर भी इस समस्त लेखन में उस समय की अफ़्रीकी आवाजें नहीं सुनाई देतीं। यूरोपीय व्यापारियों या अमेरिकी दास मालिकों के दस्तावेजों के आधार पर ही सारा शोध होता है। कभी-कभी मौखिक सामग्री का जिक्र हो जाता है। असल में अफ़्रीका के भीतर गुलामी के मसले पर खामोशी बरती जाती है। किताब में दास प्रथा की कहानी के मामले में अटलांटिक के दोनों छोरों को जोड़ने की कोशिश की गई है।

2006 में यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़िर्निया प्रेस से लौरा पुलिदो की किताब 'ब्लैक, ब्राउन, येलो, ऐंड लेफ़्ट: रैडिकल ऐक्टिविज्म इन लॉस एंजेल्स' का प्रकाशन हुआ। किताब अमेरिकी समाज और सरकार में व्याप्त गोरे प्रभुत्व के विरोध में उपजी राजनीति के वामपंथी तेवर को उजागर करने के मकसद से लिखी गई है। साथ ही इसमें काले के साथ समस्त अश्वेत समुदाय को उठाया गया है। असल में 1968 से 1978 के बीच लास एंजेल्स में थर्ड वर्ल्ड लेफ़्ट नामक आंदोलन चला जिसमें ये समूह शामिल थे। लेखक की मान्यता है कि अश्वेत समुदाय के राजनीतिक मिजाज को समझने के लिए यह समय सबसे महत्वपूर्ण है। पूंजीवाद और नस्लवाद से लड़ने के लिए प्रतिबद्ध उस आंदोलन की परिणति समझकर ही वर्तमान राजनीतिक रुख का तर्क बोधगम्य हो सकता है। लगा कि वर्ग चेतना के आधार पर ही विभिन्न नस्ली समूहों को एक साथ लाकर समाजार्थिक न्याय का व्यापक संघर्ष चलाया जाना संभव है।

2007 में न्यूयार्क यूनिवर्सिटी प्रेस से गेराल्ड हार्ने की किताब 'द डीपेस्ट साउथ: द यूनाइटेड स्टेट्स, ब्राज़ील, ऐंड द अफ़्रीकन स्लेव ट्रेड' का प्रकाशन हुआ। किताब में उन्नीसवीं सदी में अफ़्रीकी गुलामों के व्यापार के सिलसिले में दो साम्राज्यों, ब्राज़ील और अमेरिका के संबंधों की कहानी कही गई है। चार महाद्वीपों की कहानी होने के बावजूद केंद्र में अमेरिका है। ब्राज़ील में गुलामों के व्यापार में शामिल अमेरिकी लोगों पर खास ध्यान दिया गया है। इसमें ब्रिटेन और अमेरिका के बीच के टकराव का जिक्र है जिसके

चलते 1812 में उनके बीच युद्ध हुआ और 1830 में ब्रिटेन ने अपने साम्राज्य में गुलामी का अंत कर दिया। उस जमाने में गुलामी इतना लाभकर व्यवसाय था कि आज के क्रिकेट की तरह ही सभी रसूखदार लोगों का कुछ न कुछ निवेश उसमें रहता था।

2007 में फ़रार, स्त्रास ऐंड गीरू से सैदिया हार्टमैन की किताब 'लूज योर मदर: ए जर्नी एलांग द अटलांटिक स्लेव रूट' का प्रकाशन हुआ। लेखिका को घाना जाने पर विदेशी समझे जाने का अनुभव हुआ। पहले तो उन्हें इस तरह पुकारा जाना बुरा लगता था लेकिन बाद में उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया। उनके अश्वेत होने के बावजूद स्थानीय लोग खुद से उन्हें अलग समझते थे। मुंह खोलते ही उनकी भाषा इसका सबूत दे देती थी। अपनी पहचान मिटाने के लिए इस भाषा को सीखने में उन्हें काफी मशक्कत करनी पड़ी थी। अब वही भाषा उन्हें अपने लोगों से दूर कर रही थी। लोग गुलामी का नाम लेने से बच रहे थे लेकिन कहावतों की भाषा में बोल रहे थे। लेखिका ने उनकी मारक कहावत का उल्लेख किया है। कहावत थी- पेड़ पर उगे कुकुरमुत्ते की जड़ गहरी नहीं होती। उन्होंने एक दोस्त से शिकायत की कि घाना से अधिक बेगानेपन उन्हें कहीं नहीं हुआ जबकि उनके पुरखे इसी जगह से गए थे। दूसरी ओर जिस देश में उनका जन्म हुआ था उसे भी वे अपना नहीं समझ पाती थीं। गुलामों का अस्तित्व इसी तरह का है। हरेक जगह पर वह बाहरी होता है। असल में जब वे बेचे गए उस समय भी तो अपने लोगों के लिए बाहरी ही थे। असल में गुलाम तो पूर्वी यूरोप के लोग होते थे इसलिए उनकी प्रजाति से जुड़ा शब्द 'स्लेव' गुलामों के लिए अपनाया गया।

2007 में ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से माइकेल जे क्लारमन की किताब 'अनफ़िनिश्ड बिजनेस: रेशियल इक्वलिटी इन अमेरिकन हिस्ट्री' का प्रकाशन हुआ। किताब एक पुस्तक श्रृंखला के तहत छापी गई है। श्रृंखला अनुल्लंघनीय अधिकारों के बारे में है। इस तरह पहले ही नस्ली समानता को अधिकार मान लिया गया है। संपादक के अनुसार नस्ल का इतिहास अमेरिका की दुविधा है। इसके बारे में जानकारी जरूरी है। लेखक ने शुरू से लेकर वर्तमान सदी तक नस्ल के सवाल पर विचार किया है। उनका कहना है कि नस्ली रिश्तों में सुधार का कारण कोई सदिच्छा नहीं बल्कि युद्ध, प्रवास या आर्थिक वजहों से होता रहा है। उनका यह भी मानना है कि कानून ने इसे कोई गति नहीं दी बल्कि सुधार का प्रतिबिम्ब कानूनों के निर्माण में दिखाई पड़ा। अमेरिकी क्रांति के समय न्यू यार्क के दस प्रतिशत निवासी गुलाम थे। क्रांति ने सभी मनुष्यों की स्वतंत्रता का उद्घोष किया तो उसमें गुलाम शामिल नहीं माने गए। उत्तरी भाग के स्वतंत्र अश्वेतों के अधिकार भी सीमित थे और उन्हें अपहरण तथा जबरन गुलाम बनाए जाने की शंका बनी रहती थी। 1842 में सुप्रीम कोर्ट ने व्यवस्था दी कि उत्तरी प्रांत दक्षिण से भागे गुलामों को फिर से पकड़ने के गुलाम मालिकों के अधिकार पर रोक नहीं लगा सकते। कुछ प्रांतों ने अश्वेतों के आगमन पर प्रतिबंध लगा दिया और गुलामी के विरोधियों को अक्सर परेशान किया जाता था। स्वतंत्र अश्वेतों को भी कोई अधिकार नहीं हासिल थे। इसके

बाद गृहयुद्ध, गुलामों की मुक्ति और पुनर्निर्माण का समय आता है। इसके साथ ही कू क्लक्स क्लान का उभार होता है। क्लारमन कहते हैं कि दूसरे विश्वयुद्ध में फ़ासीवाद के विरोध में अमेरिका के कूद पड़ने से नस्ली बदलाव की प्रेरणा पैदा हुई। हालांकि गुलामी, भीड़ हत्या, मतदान कर तथा सरकार समर्थित पृथक्करण से अमेरिका बाहर आ गया है लेकिन अनेक नस्ली अवरोध अब भी पार करने हैं। मकान और शिक्षा के मामले में नस्ली विषमता बढ़ी है। बेरोजगारी में अश्वेतों का हिस्सा गोरों का दोगुना है। गोरे परिवार के मुकाबले अश्वेत परिवार की संपत्ति औसतन दस गुनी कम है। कॉलेज से अधिक अश्वेत जेल में होते हैं। आबादी में 12 प्रतिशत होने के बावजूद कैदियों में आधे अश्वेत ही हैं। नस्ली सुधार की राह में कट्टर सुप्रीम कोर्ट ने लगातार रोड़े अटकाए हैं। इन सबके चलते क्लारमन को लगता है कि अश्वेत समुदाय आज भी नस्ली समानता और समेकन से दूर ही है। वे बताते हैं कि नस्ली विषमता न केवल मौजूद है बल्कि हाल के दिनों में बढ़ी है।

2007 में यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिनेसोटा प्रेस से सेड्रिक जॉनसन की किताब 'रेवोल्यूशनरीज टु रेस लीडर्स: ब्लैक पावर ऐंड द मेकिंग ऑफ़ अफ्रीकन अमेरिकन पोलिटिक्स' का प्रकाशन हुआ। लेखक ने 1966 के जून महीने में 120 मील के राजपथ पर जेम्स मेरेडिथ के एकल मार्च अगेंस्ट फ़ीयर से बात शुरू की है। उस यात्रा में उन्हें दक्षिणी प्रांतों के अत्यंत पार्थक्यवादी क्षेत्रों से गुजरना था। उन्हें उम्मीद थी कि उनके इस साहसिक अभियान से जिम क्रो कानूनों के विरोध को मदद मिलेगी। दूसरे दिन उन पर गोली चली जिससे वे घायल हो गए। अब मार्च में विभिन्न संगठनों के बहुतेरे कार्यकर्ता शामिल हुए। वे अधिकतर नरमपंथी थे लेकिन तनाव बढ़ता गया। वे लोग रास्ते में अश्वेत लोगों को मतदाता के बतौर पंजीकृत करने की अपील करते। कुछ दिन बाद एक कार्यकर्ता को पुलिस ने गिरफ़्तार कर लिया। उसने रैली में कहा कि सताइसवीं बार उसे गिरफ़्तार किया गया है और अब वह जेल नहीं जाएगा। उसने कहा कि बरसों से अश्वेत लोग आजादी मांग रहे हैं और अब समय आ गया है कि काले लोग अपनी ताकत दिखाएं। उसके इस भाषण से उदारवादी समेकन की धीमी प्रक्रिया से नौजवानों की निराशा को स्वर मिला। काले लोगों की ताकत की यह धारणा उत्तरी प्रांतों के राजनीतिक हलकों में विकसित हुई, दक्षिणी प्रांतों में पार्थक्य की समाप्ति से इसे बल मिला और उपनिवेशवाद विरोध ने इसे लहर में बदल दिया।

2008 में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस से मेरिलीन लेक और हेनरी रेनॉल्ड्स की किताब 'ड्राइंग द ग्लोबल कलरलाइन: ह्वाइट मेन'स कंट्रीज ऐंड द इंटरनेशनल चैलेन्ज ऑफ़ रेशियल इक्वलिटी' का प्रकाशन हुआ। लेखकगण ने बताया है कि 1910 में ड्यु बोइस ने एक लेख लिखकर घोषित किया कि अचानक दुनिया ने गोरेपन को महत्वपूर्ण मान लिया है और गोरे लोग अपनी चमड़ी के रंग पर अभिमान करने लगे हैं। इससे दस साल पहले उन्होंने कहा था कि बीसवीं सदी की समस्या चमड़ी के रंग की समस्या है। वे मानते थे कि अश्वेत के भीतर दो आत्माओं की मौजूदगी रहती है। एक ओर वह अमेरिकी होता है और दूसरी ओर

अश्वेत होता है। इनके चलते उसका चिंतन और उसकी रुझान में भी दोरंगा वैपरीत्य होता है। गोरे अमेरिका का अन्याय, संघर्ष और दमित आकांक्षाओं का काला इतिहास है। इन दोनों आत्माओं को मिलाकर अश्वेत मनुष्य बेहतर मानस गढ़ना चाहता है। यह समस्या केवल अमेरिका तक सीमित नहीं है, इसका विस्तार वैश्विक है। उपनिवेशवाद को भी वे रंगभेद की इसी व्यवस्था का अंग मानते थे। उनका कहना था कि इसके चलते गोरापन लगभग धर्म की तरह श्रेष्ठ हो चला है। उन्हें लगा कि चमड़ी के रंग के बारे में पहले भी लोग सचेत रहा करते थे लेकिन व्यक्तियों में गोरेपन की खोज आधुनिक परिघटना है। गोरापन हमेशा के लिए धरती का मालिक होने का मामला है। ड्यु बोइस के इसी तर्क को आगे बढ़ाते हुए लेखक कहते हैं कि गोरेपन की इस उन्मादी लालसा का कारण इस मालिकाने का खतरे में पड़ना है। इसमें दुनिया भर के उपनिवेशित अश्वेतों के विद्रोह की प्रतिक्रिया की झलक मिलती है।

2010 में ए बी सी क्लीयो के ग्रीनवुड प्रेस से गेराल्ड हार्ने की किताब 'डब्ल्यू ई बी ड्यू बोइस: ए बायोग्राफी' का प्रकाशन हुआ। लेखक ने किताब की शुरुआत 1951 में नब्बे साल की उम्र में ड्यु बोइस की गिरफ़्तारी से की है। उन्हें इस किस्म के बरताव की कोई अपेक्षा नहीं थी क्योंकि लेखक और कार्यकर्ता तथा राजनेता के रूप में उनकी ख्याति अमेरिका के बाहर भी थी। समय बदल चुका था और उन्हें इस बदलाव को मानना पड़ा। दूसरे विश्वयुद्ध में अमेरिका का साथ देने के बाद अब सोवियत संघ को दुश्मन माना जा रहा था। इसके बावजूद वे सोवियत संघ के साथ दोस्ती की वकालत कर रहे थे। उन्हें आशंका थी कि दोनों के बीच परमाणु युद्ध की स्थिति में मानवता खत्म हो जाएगी। उन पर सोवियत संघ का एजेंट होने का आरोप था। कारण कि हिरोशिमा और नागासाकी की बरबादी के बाद परमाणु हथियारों पर प्रतिबंध की मांग करने वाली एक अंतरराष्ट्रीय संस्था की अध्यक्षता उन्होंने स्वीकार की थी। दोनों महाशक्तियों के बीच तनाव बढ़ने की स्थिति से चिंतित होकर शांति के लिए एक प्रदर्शन में वे शामिल हुए थे। प्रदर्शन में शामिल होना उनके लिए नया नहीं था।

23 फ़रवरी, 1868 को उनका जन्म हुआ था जब गुलामी की समाप्ति के बाद पुनर्निर्माण का समय था। लेकिन इस सुबह पर ग्रहण लग गया। नस्ली पार्थक्य या जिम क्रो कानूनों ने अश्वेतों के जीवन को नरक बना दिया था। 27 अगस्त, 1963 में घाना में उनका निधन हुआ। नागरिक अधिकार कानून और मतदान अधिकार कानून का लाभ वे नहीं उठा सके। दोनों कानून उनके निधन के बाद पारित हुए। उनका पूरा जीवन बराबरी के लिए लड़ने में बीता। अपने उथल-पुथल भरे जीवन में इस मकसद के लिए प्रत्येक अवसर का उन्होंने इस्तेमाल किया। इसके लिए उन्होंने नस्ली समेकन, अश्वेत राष्ट्रवाद, अफ़्रीकावाद से लेकर मार्क्सवाद तक सब कुछ को आजमाया। अश्वेतों के बारे में उनका लेखन बेहद महत्व का है। उन्हें लगा कि जिनके बारे में लिखने से उन्हें प्रसिद्धि मिल रही है वे तो भीड़ हत्या, कर्ज, बेरोजगारी और रंगभेद से तबाह हैं। इसके बाद उन्होंने सक्रिय आंदोलन का रास्ता अपनाया। सबसे पहले उन्होंने बुकर टी वाशिंगटन का

विरोध किया जो सत्ता के विरोध को तिलांजलि देकर व्यावसायिक प्रगति पर ध्यान देने की वकालत कर रहे थे। उन्होंने जिस संगठन की स्थापना की उसने पार्थक्य विरोध की लड़ाई का नेतृत्व किया। एक पत्रिका निकाली जिसके कुछ ही दिनों में हजारों ग्राहक हो गए। अश्वेत राष्ट्रवाद से वैचारिक जुड़ाव के चलते उन्होंने संगठन छोड़ दिया। उन दिनों 'अफ़्रीका की ओर' का आकर्षण अश्वेतों में व्याप्त था।

2011 में वर्सो से जुआन गोन्ज़ालेज और जोसेफ टोरेस की किताब 'न्यूज फॉर ऑल द पीपुल: द एपिक स्टोरी ऑफ़ रेस ऐंड द अमेरिकन मीडिया' का प्रकाशन हुआ। लेखकों का कहना है कि दुनिया में शायद ही किसी अन्य देश के लोग दैनिक समाचार के आधार पर अपनी छवि बनाने के उतने आदती होंगे जितने अमेरिकी लोग होते हैं। बहुत पहले से आबादी के लिहाजन अखबार की खपत अमेरिका में बहुत अधिक रही है। इस समय सूचना और समाचार के आधिक्य से देश ऊब चूभ है। खबर का असर आधुनिक समाज में लोगों पर तत्काल पड़ता है। इसके बावजूद अधिकतर अमेरिकी आस-पास की दुनिया से अनजान रहते हैं। समाचार उत्पादकों की विश्वसनीयता घटती जा रही है। किताब में अमेरिकी समाज में खबर तंत्र और मीडिया के असर का विवरण तो है लेकिन इस विषय की अन्य किताबों से इसकी भिन्नता दो मामलों में है। एक कि अमेरिका में वैसा मीडिया क्यों बना जैसा दिखाई देता है। इसका रिश्ता लोकतंत्र में प्रेस की भूमिका के बारे में नेताओं की राय से है। दूसरे इसमें अखबार, रेडियो और टेलीविजन द्वारा नस्ल की प्रस्तुति की परीक्षा की गई है। इस मामले में जनता को भ्रमित करने और नस्ली पूर्वाग्रह विकसित करने में ढेर सारे प्रमाण इस किताब में एकत्र किए गए हैं।

2014 में बेसिक बुक्स से एडवर्ड ई बैप्टिस्ट की किताब 'द हाफ़ हैज नेवर बीन टोल्ड: स्लेवरी ऐंड द मेकिंग ऑफ़ अमेरिकन कैपिटलिज्म' का प्रकाशन हुआ। किताब में अमेरिका के दक्षिणी प्रांतों से भागकर आए गुलामों के बल पर गृहयुद्ध में अमेरिकी सेनाओं की जीत और इसके फलस्वरूप गुलामी की समाप्ति की कहानी है। युद्ध के खात्मे के बाद मुक्त हुए गुलामों के लिए साक्षरता अभियान चला। इसके लोग बाद में स्कूल अध्यापक बने और लाखों अश्वेतों की शिक्षा का काम किया। गृहयुद्ध में गुलामी के सवाल पर गोरे ही आपस में लड़े थे। उत्तरी प्रांतों के लोगों को दक्षिणी प्रांतों के गुलाम मालिकों का अहंकार परेशान करता था। युद्ध में वे जीते लेकिन उसके बाद के काम की जिम्मेदारी उन्होंने कभी नहीं ली। जिम क्रो कानूनों ने इन प्रांतों में अश्वेतों के साथ अमानुषिक पार्थक्य स्थापित किया और उन्हें मतदान के अधिकार से वंचित रखा। बात न मानने वाले अश्वेतों की भीड़ हत्या होती रही। दक्षिणी प्रांतों के बाहर भी रंगभेद का प्रसार हुआ। अनेक गोरे इस बात में यकीन करते थे कि गोरे लोग अधिक मूल्यवान होते हैं। उनकी चमड़ी का रंग उनकी श्रेष्ठता का द्योतक है। वे अपने को रूसी, इतालवी, ग्रीक और स्लाव यहूदियों से भी श्रेष्ठ समझते थे। बीसवीं सदी के आरम्भ तक भी अमेरिकी इतिहासकार यही साबित करते रहे कि गुलामी से गोरों की बरतरी सिद्ध है इसलिए अश्वेत समुदाय के साथ जिम क्रो कानूनों और उन्हें मतदान से वंचित रखकर कोई अन्याय नहीं हो

रहा। यह भी कहा जाता था कि गुलामी का मकसद मुनाफ़ा कमाना नहीं था और प्लांटेशनों के मालिक बहुत उदारमना हुआ करते थे। वे यह भी बताते थे कि इसके कारण कपास का उत्पादन सस्ती दर पर होता रहा है।

2017 में सिटी लाइट्स बुक्स से मुमिया-अबू जमाल की किताब 'हैव ब्लैक लाइव्स एवर मैटर्ड?' का प्रकाशन हुआ। लेखक ने इस किताब को उत्पीड़ितों के इतिहास के रूप में लिखने की कोशिश की है। हाल के दिनों में अमेरिका में अश्वेतों की हत्याओं के प्रतिवाद में नारे के रूप में ब्लैक लाइव्स मैटर का प्रयोग हुआ था। उसी नारे के सहारे इस लेखक का कहना है कि काले लोगों की जान अगर आज महत्वहीन समझी जा रही है तो उसे कभी महत्व की चीज नहीं समझा गया था। जिस समय का इतिहास किताब में दर्ज किया गया है उसमें महामंदी के बाद का सबसे बड़ा आर्थिक संकट, हिप हाप का सांस्कृतिक प्रभुत्व, बड़े पैमाने पर अश्वेतों की कैद, ओबामा का राष्ट्रपति होना, अश्वेत आंदोलन का प्रसार और ट्रम्प का अप्रत्याशित उभार शामिल हैं। इस दौरान अश्वेत राष्ट्रपति रहते हुए भी अश्वेतों को लगातार खौफ़ का सामना करना पड़ा। अमेरिकी समाज के तमाम अदृश्य क्षेत्रों में अश्वेत, आप्रवासी और गरीबों का बहुमत है। उनके बीच विद्रोही, उदीयमान और क्रांतिकारी आकांक्षा, चिंतन और जीवन का व्यापक प्रसार हुआ। दमन से ही एकजुटता, प्रतिरोध, विद्रोह और बदलाव का जन्म होता है। प्रत्येक नए कत्ल के साथ इस एकजुटता और प्रतिरोध की अभिव्यक्ति तीखी होती गई। इन आंदोलनों को अश्वेत स्त्रियों ने जन्म दिया था और यह अश्वेत स्त्रियों के विद्रोही इतिहास की संगति में ही था।

2018 में विलियम एफ़ पेपर की किताब 'ऐन ऐक्ट ऑफ़ स्टेट: द एक्सक्यूशन ऑफ़ मार्टिन लूथर किंग' का प्रकाशन की पचासवीं सालगिरह पर नया संस्करण प्रकाशित हुआ। सबसे पहले यह किताब 2003 में छपी थी। उसके बाद 2008 में इसका फिर से प्रकाशन हुआ था। लेखक का कहना है कि जिस व्यक्ति पर उनकी हत्या का आरोप लगाया गया था उसे अदालत ने निर्दोष पाया। तीस दिन तक चले मुकदमे में जितने सबूत आए उनके आधार पर लेखक इस हत्या को अमेरिकी खुफ़िया तंत्र, नस्ली माफ़िया, स्थानीय पुलिस और सरकारी अधिकारियों का संयुक्त काम मानते हैं। वे किंग द्वारा वियतनाम युद्ध के विरोध को खामोश कर देना चाहते थे और राजधानी में उनके प्रस्तावित धरने को कामयाब नहीं होने देना चाहते थे। गोली लगने के बाद भी वे जीवित थे। अस्पताल में सर्जन ने उनके मुंह पर तकिया रखकर उनकी जान ली। इस कृत्य को नर्स ने देखा था।

2018 में ज़ेड बुक्स से केहिंडे एन्ड्रूयूज की किताब 'बैक टु ब्लैक: रीटेलिंग ब्लैक रैडिकलिज्म फॉर द 21स्ट सेन्चुरी' का प्रकाशन हुआ। लेखक ने नए समय में अश्वेत आंदोलन के उभार से बात शुरू की है लेकिन पृष्ठभूमि में पुराने जमाने का क्रांतिकारी आंदोलन मौजूद है। पहले की तरह यह आंदोलन भी पुलिस के हाथों अश्वेत युवकों की हत्या के विरोध में पैदा हुआ है। उसी तरह विरोध में लिकले जुलूसों में मृतक के

परिवारी लोगों ने न्याय की भावुक गुहार लगाई है। इस समय अगर साठ के दशक की याद आ रही है तो इसका मतलब कि पिछले पचास सालों में हालात बदले नहीं हैं। प्रदर्शन दूर देशों में घटी घटनाओं के विरोध में भी हुए जिससे नस्लवाद और उसके विरोध की अंतरराष्ट्रीय मौजूदगी का पता चलता है। चमड़ी का काला होना व्यक्ति को संदिग्ध बना देता है। अश्वेतों की बस्तियों में रहना सरकार के निशाने पर आने के लिए पर्याप्त है। इंग्लैंड में आबादी में 3% होने के बावजूद जेल में 13% अश्वेत हैं। पिछले वर्षों में इंग्लैंड और अमेरिका दोनों ही जगहों पर हासिल कुछ अधिकारों ने नस्ली भेदभाव के प्रति लोगों के दिमाग में गफ़लत पैदा कर दी थी। लगने लगा था कि समता और समावेश की नीति के सहारे अश्वेत आबादी भी प्रगति के पथ पर भागीदार के बतौर चलेगी। सचाई यह है कि राष्ट्रपति भवन में अश्वेत व्यक्ति की लंबी मौजूदगी के बावजूद अश्वेत जीवन का अवमूल्यन हुआ।

लेखक का मानना है कि अश्वेत आंदोलन की कोई एक ही धारा नहीं है। उनमें भी आपसी भेद हैं। कुछ लोग मैल्कम एक्स तक को नागरिक अधिकार आंदोलन से जोड़कर देखते हैं जब कि वे इस आंदोलन की गंभीर आलोचना करते थे। समकालीन होने के बावजूद नागरिक अधिकार आंदोलन के नेता मार्टिन लूथर किंग से उनकी मुलाकात भी बहुत कम हुई थी। उनके बीच के मतभेद बुनियादी थे। नागरिक अधिकार आंदोलन को अश्वेत राजनीति में उदारवादी परंपरा का प्रतिनिधि कहा जाना चाहिए। ये लोग नस्ली विषमता की बात तो करते थे लेकिन उसका समाधान व्यवस्था के भीतर ही खोजते थे। इसीलिए ओबामा की जीत को बहुतेरे लोग उस धारा की चरम परिणति मानते हैं। सरकारी तंत्र में अधिकाधिक अश्वेतों के प्रतिनिधित्व की वकालत इसी धारा की निरंतरता है। इसके विपरीत मैल्कम एक्स अश्वेत राजनीति की क्रांतिकारी धारा से जुड़े हुए थे। उनके लिए व्यवस्था ही समस्या थी। इस व्यवस्था के भीतर पुलिस में अश्वेत सिपाहियों की भर्ती से वे ही अश्वेत युवकों का कत्ल करेंगे। यही दक्षिण अफ्रीका के मामले में दिखाई दे रहा है। अश्वेत राजनीति की उसी क्रांतिकारी परंपरा की वापसी इस किताब का घोषित मकसद है। फिलहाल क्रांतिकारिता बदनाम धारणा हो गई है। इस्लामी चरमपंथ के आगमन के साथ क्रांति को उसके साथ ही हिंसा का समानार्थी बना दिया गया है लेकिन लेखक के अनुसार क्रांतिकारिता और चरमपंथ एक दूसरे से पूरी तरह अलग हैं।

2018 में बीकन प्रेस से क्रिस्टल एम फ़्लेमिंग की किताब 'हाउ टु बी लेस स्टुपिड एबाउट रेस: ऑन रेसिज्म, ह्वाइट सुप्रीमेसी, ऐंड द रेशियल डिवाइड' का प्रकाशन हुआ। लेखक के मुताबिक औपनिवेशिक नरसंहार और गुलामी के जरिए स्थापित देश में सौ साल बाद लोग इस दुखद सचाई का सामना करने को मजबूर हैं कि नस्ल अब भी मौजूद है। इसके बावजूद कुछ चीजें काफी भ्रामक हैं। आखिर दो बार किसी अश्वेत को राष्ट्रपति चुनने के बाद उसी देश में एक नस्ली नेता राष्ट्रपति कैसे चुन लिया गया। जो गोरे उदारवादी अपने ट्रम्प समर्थक मित्रों या रिश्तेदारों का मुकाबला नहीं कर पा रहे वे ही प्रतिरोध का नेतृत्व करने का दावा कैसे कर रहे हैं। ओबामा के जमाने में मुस्लिम लोगों के साथ अन्याय पर जिनकी जुबान नहीं

खुली वे अब एक रिपब्लिकन के राष्ट्रपति होने पर अचंभा जता रहे हैं। गोरी चमड़ी की श्रेष्ठता तले जब तमाम अश्वेत दबाए जा रहे हैं तो कुछ लोग अपने भोलेपन में प्यार मुहब्बत के सहारे नस्ली विभाजन पर विजय पाने का सपना देख रहे हैं। नस्ल के बारे में असल में कोई सही अध्ययन नहीं है। पाठ्यक्रम की जो किताबें हैं भी उनमें झूठ, असत्य और गलत तथ्य मौजूद हैं। इसीलिए उनको लगता है कि नस्ल के बारे में इतने भारी अज्ञान के साथ मार्टिन लूथर किंग की बातें कैसे समझी जा सकती हैं। नस्ल का सवाल बहस, विवाद और झगड़े की वजह रहा है फिर भी सारी पहचानों के बावजूद इस पर सहमति होनी चाहिए कि नस्ल का सवाल सर्वव्यापी है। इसके बावजूद नस्ल के बारे में फैले अज्ञान का कारण भी नस्ल ही है। गोरी चमड़ी के श्रेष्ठता बोध से निर्मित मानस के चलते समाज, इतिहास और व्यक्ति के बारे में सही समझ नहीं बन पाती।

2018 में बीकन प्रेस से जोसेफ रोजेनब्लूम की किताब 'रिडेम्पशन: मार्टिन लूथर किंग, जूनियर'स लास्ट 31 आवर्स' का प्रकाशन हुआ। 1968 में जिस समय किंग की हत्या हुई उसके कुछ ही दिन बाद लेखक उसी जगह प्रशिक्षु पत्रकार के तौर पर काम करने गए थे। तब पत्रकारों के बीच बातचीत का एकमात्र विषय वही घटना थी। तभी उन्होंने इस तरह की किताब लिखने का इरादा किया था। चालीस साल बाद जाकर किताब लिखी जा सकी। इस बीच उन्होंने उनकी बहुतेरी जीवनियों पर नजर डाली। उनमें आखिरी समय के बारे में एकाध अध्याय होते थे। उनके हत्यारे के बारे में तो कोई बात ही नहीं होती थी। होती भी तो बस यही सवाल उठाया जाता कि उसने हत्या क्यों की और उस योजना में और लोग भी शामिल थे या नहीं। विस्तृत छानबीन से केवल यह निकला कि वह घोर नस्लवादी था। हत्या के मकसद से परदा अब तक नहीं उठा है। उसके दो भाइयों को षड़यंत्र का भागीदार बताया गया।

असल में अंतिम दिनों में किंग अपने जीवन के सबसे महत्वाकांक्षी अभियान में जुटे थे। दस साल से नस्ली पार्थक्य और भेदभाव के खात्मे की लड़ाई लड़ने के बाद वे अब अमेरिका से हमेशा के लिए गरीबी खत्म करने के अभियान में लगे। वाशिंगटन में झोपड़ी डालकर धरने में बसने के लिए वे हजारों गरीब लोगों को गोलबंद कर रहे थे। उनका संकल्प था कि जब तक विधान बनाने वाले गरीबी हटाने का विस्तृत कार्यक्रम पारित नहीं करते तब तक वे गरीबों की अपनी फौज का धरने में नेतृत्व करेंगे। उनकी जीवनियों में आखिरी वक्त में चार तिथियां बड़े महत्व की हैं। 18 मार्च को वे कूड़ा कामगारों की हड़ताल के पक्ष में आयोजित रैली में बोलने इस जगह आए थे। दस दिन बाद 28 मार्च को हड़ताल के पक्ष में आयोजित जुलूस का नेतृत्व करने आए जिसमें टकराव हुआ। फिर 3 अप्रैल को शांतिपूर्ण जुलूस संगठित करने आए। उनको लगा कि अगर जुलूस बिना किसी टकराव के संपन्न हो जाता है तो राजधानी का प्रस्तावित धरना भी शांतिपूर्ण रहेगा। अगले ही दिन उनकी हत्या हो गई। इन उपर्युक्त परिस्थितियों में उन्हें एक व्यक्ति के षड़यंत्र की बात पर भरोसा नहीं होता। इसी वजह के चलते उन्होंने थोड़ी और छानबीन की जरूरत समझी।

2018 में वर्सो से पेरो गाग्लो डागबोवी की किताब 'रीक्लेमिंग द ब्लैक पास्ट: द यूज ऐंड मिसयूज आफ़ अफ्रीकन अमेरिकन हिस्ट्री इन द ट्वेन्टी-फ़र्स्ट सेन्चुरी' का प्रकाशन हुआ। लेखक इतिहास के अध्यापक हैं और अमेरिका में अश्वेत समुदाय का इतिहास पढ़ाते हैं। उनसे मिलने वाले लोग अक्सर आम इतिहास की बात तो करते हैं लेकिन उनके विषय से संबंधित शायद ही कोई सूचना उनके पास होती हो। लेखक के अनुसार अमेरिकी लोग अश्वेत संस्कृति की व्याप्ति के तो आदी हैं लेकिन उनकी सोच में अश्वेत इतिहास की जगह बहुत कम होती है। गुलामी और पार्थक्य का शर्मनाक अश्वेत इतिहास सामान्य बातचीत का हिस्सा नहीं बन सका है। इसके विपरीत अश्वेत बुजुर्गों से मुलाकात होने पर वे लगभग हमेशा पुराने दिनों का कोई किस्सा सुनाते हैं और इतिहास के दोहराए जाने पर अफ़सोस जाहिर करते हैं। इससे लेखक को मौखिक इतिहास की सामग्री प्राप्त होती है।

2018 में हेमार्केट बुक्स से माइकेल बेनेट और डेव ज़िरिन की किताब 'थिंग्स दैट मेक ह्वाइट पीपुल अनकम्फ़र्टेबुल' का प्रकाशन हुआ। लोगों को संकट से उबारने वाले मिथकीय कार्टून नायकों के रंगभेद पर टिप्पणी से किताब की शुरुआत होती है। अश्वेत बच्चों की याद में ऐसे किसी महानायक की तस्वीर नहीं होती जो उनके लोगों को बचाने के लिए आता हो। इसलिए अश्वेत बच्चों के नायक खिलाड़ी होते हैं। वे ऊंची-ऊंची इमारतों पर छलांग तो नहीं लगाते लेकिन खेल के मैदान में सरपट भागते हुए तमाम अवरोध पार करते जाते हैं। इनको वे अपने लोग महसूस होते हैं। उनके साथ उम्मीद, बदलाव, शिक्षा और विवेक जुड़े चले आते हैं। उनके जैसा दिखने के चक्कर में बच्चे जर्सी और खिलाड़ियों के जूते पहनते हैं। मुहम्मद अली जैसे लोग उनके हीरो होते हैं। जब ये किसी अन्याय का विरोध करते हैं तो लगता है जैसे वे इनको ही बचाने के लिए जूझ रहे हैं। इस तरह लेखक ने अश्वेत समुदाय के सांस्कृतिक मानस को बनाने वाली स्थितियों को स्पष्ट किया है।

2019 में प्लूटो प्रेस से कोजो कोरम के संपादन में 'द वार आन ड्रग्स ऐंड द ग्लोबल कलर लाइन' का प्रकाशन हुआ। संपादक की प्रस्तावना के अतिरिक्त किताब में नौ लेख संकलित हैं। संपादक के मुताबिक ड्यू बोइस का मत था कि समूची बीसवीं सदी की समस्या नस्ल की समस्या है। साम्राज्यों की उन्नीसवीं सदी में यूरोपीय औपनिवेशिक ताकतों ने दुनिया भर के संसाधनों और भूभागों पर कब्जा करने के लिए आपस में होड़ लगाई। इनके आचरण में चमड़ी के रंग पर आधारित ऊंच-नीच की नस्ली सोच निहित थी। धरती पर गोरों के अधिकार के पीछे इसी तर्क का इस्तेमाल किया गया। बीसवीं सदी में इस साम्राज्यवादी विश्व व्यवस्था में आंतरिक अंतर्विरोध पैदा होने लगे और सदी के मोड़ पर ही युद्ध शुरू हो गए। इसी संदर्भ में ड्यू बोइस ने ठीक ही कहा कि साम्राज्यवाद द्वारा निर्मित इस वैश्विक रंगभेद को दुरुस्त करना बीसवीं सदी का कार्यभार है। इसके जरिए ही नई और सार्वभौमिक विश्व व्यवस्था की कल्पना संभव है। बीसवीं सदी में कुछ हद तक इस कार्यभार को अंजाम भी दिया गया और उम्मीद थी कि आगामी सदी में

इसे पूरी तरह समाप्त कर लिया जाएगा। इक्कीसवीं सदी में इस उम्मीद का कोई कारण नजर नहीं आता। उपनिवेशों की औपचारिक मुक्ति के बावजूद रंगभेद आधारित वैश्विक विभाजन समाप्त नहीं हुआ है। कानून की दुनिया से उसकी विदाई के बावजूद विभिन्न क्षेत्रों में उसका पुनरुत्पादन जारी है।

2020 में बेसिक बुक्स से पेनिएल ई जोसेफ की किताब 'द स्वर्ड ऐंड द शील्ड: द रेवोल्यूशनरी लाइव्स ऑफ़ मैल्कम एक्स ऐंड मार्टिन लूथर किंग जूनियर' का प्रकाशन हुआ। अमेरिका के अश्वेत आंदोलन में इन दोनों नेताओं को आपस में भिन्न-भिन्न रास्तों का पैरोकार माना जाता है। उनकी इस भिन्नता को शीर्षक में सही तरीके से व्यक्त किया गया है। मैल्कम एक्स को अधिक क्रांतिकारी और मार्टिन लूथर किंग को अपेक्षाकृत नरम विचारों का माना जाता है। समानता यह है कि दोनों ही नेताओं का कत्ल हुआ था। किताब की शुरुआत 26 मार्च 1964 से होती है जब अमेरिका की सीनेट में नागरिक अधिकार बिल पर बहस हुई थी। इसको पारित होने से रोकने में नस्ली न्याय के विरोधी बहुत समय से लगे हुए थे। इस बिल के पारित होने से नस्ली भेदभाव के खात्मे के चलते देश बहुनस्ली लोकतंत्र के करीब पहुंच जाता। उस बहस को सुनने के लिए दोनों नेता सीनेट में मौजूद थे और बहस के बाद एक साथ सीढ़ी से उतरते देखे गए। किंग को नस्लभेद विरोधी आंदोलन का सबसे बड़ा प्रतीक माना जाता था और वहां उनकी मौजूदगी से बहस की गरिमा में इजाफ़ा हुआ। दूसरी ओर मैल्कम एक्स की वहां मौजूदगी से पत्रकारों और दर्शकों को भय और अचम्भा महसूस हुआ। उनके इस्लाम समर्थक आंदोलन का समर्थन अश्वेतों में बहुत अधिक था लेकिन गोरे लोग उससे डरते थे। नस्ली दमन के विरोध में जारी संघर्ष के प्रवक्ता की हैसियत उनको प्राप्त थी। उन्हें अमेरिका में नस्ली न्याय का सबसे जुझारू योद्धा माना जाता था। उन्होंने प्रेस के लोगों से कहा कि वे बिल को पारित होते देखना चाहते हैं लेकिन इसके पारित हो जाने पर भी नस्ली समानता की लड़ाई जारी रहेगी क्योंकि इस तरह के काम कानून के मुकाबले जन जागृति से पूरे होते हैं। वे पहली बार सीनेट भवन में घुसे थे। मार्टिन लूथर किंग ने भी बिल के पारित होने के बाद राष्ट्रीय स्तर पर सीधी कार्रवाई की योजना घोषित की। कुछ ही दिन पहले मैल्कम एक्स ने उन्हें नरमपंथी कहा था। किंग ने बिल पारित न होने की सूरत में नस्ली तनाव बढ़ने की आशंका जताई। दोनों नेता मानते थे कि अमेरिका में नस्ली भेदभाव को टिकाए रखने में हिंसा की बड़ी जबरदस्त भूमिका है। इसके कारण काले लोगों पर गोरों की हिंसा वैध, कानूनी और नैतिक मानी जाती थी जबकि कालों की आत्मरक्षा को अपराध, खतरनाक और कानून व्यवस्था के लिए हानिकर माना जाता था।

(**परिचय :** लेखक अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली के हिंदी विभाग में प्रोफेसर हैं। प्रो. गोपाल प्रधान ने विश्व साहित्य की कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का अनुवाद, समसामयिक मुद्दों पर लेखन और उनका संपादन किया है।)